दिल्ली उच्च न्यायालय : नई दिल्ली

निर्णय तिथि : 11 मार्च 2024

नि.प्र.अ. 830/2010

संतोश भसीन ..... अपीलकर्ता

द्वारा: श्री पी.वी. कपूर, वरिष्ठ अधिवक्ता के साथ श्री जतिन सहगल, सुश्री देवना सोनी, श्री अधिरथ सिंह, श्री परीश विरमानी, श्री सिद्धांत कपूर, श्रीमती कावेरी कपूर, श्री धनंजय सहाय और श्री शिव राज स्याल, अधिवक्तागण।

बनाम

उमरी मल्होत्रा मृतक द्वारा विधिक प्रतिनिधि ..... प्रत्यर्थीगण

द्वारा: श्री रोहित कुमार, अधिवक्ता।

माननीय न्यायमूर्ति श्री अनूप जयराम भंभानी

<u>निर्णय</u>

<u>अनूप जयराम भंभानी न्या.</u>

<u>सि.वि. आ. 5722/2024</u>

सिविल प्रक्रिया संहिता 1908 (सि.प्र.सं.) की धारा 151 के तहत दायर वर्तमान आवेदन के द्वारा, अपीलकर्ता-वादी/संतोष भसीन इस

न्यायालय द्वारा दिनांक 10.01.2024 को दिए गए फैसले का स्पष्टीकरण चाहते हैं, जिसके तहत इस न्यायालय ने वर्तमान अपील की अनुमति दी थी, जिससे सि.वा. सं. 382/09/95 में विद्वान अतिरिक्त जिला न्यायाधीश ('ए.डी.जे.') द्वारा दिनांक 20.09.2010 को पारित निर्णय और डिक्री को अपास्त किया गया था। चूंकि निर्णय और डिक्री को अपास्त किया गया था, इसलिए प्रत्यर्थीगण-प्रतिवादीगण की ओर से दायर की गई प्रत्याक्षेप, जिसके द्वारा उन्होंने उस निर्णय में की गई कुछ टिप्पणियों पर आक्षेप लगाया था, का भी निपटान किया गया, जिसके लिए किसी आदेश की आवश्यकता नहीं थी।

2. वर्तमान आवेदन के द्वारा, अपीलकर्ता ने निम्नलिखित प्रार्थना किया है:

> *"क. वर्तमान आवेदन को करे की अनुमति दें, इस माननीय न्यायालय द्वारा दिनांक 10.01.2024 को पारित निर्णय को स्पष्ट करें और और संपत्ति संख्या सी-316, डिफेंस कॉलोनी, नई दिल्ली के निर्माण सहित पूरे छत को माप और सीमांकन द्वारा विभाजित करने के लिए एक स्थानीय आयुक्त को नियुक्त करें और अपीलकर्ता के हिस्से का खाली और वास्तविक कब्जा अपीलकर्ता को सौंप दें;*
>
> *"ख. स्थानीय आयुक्त अधिकृत करें और उसे एक विशेषज्ञ अर्थात वास्तुकार जिसे कम से कम 15 वर्ष का अनुभव हो, को संपत्ति संख्या सी-316, डिफेंस कॉलोनी, नई दिल्ली में निर्मित क्षेत्र सहित छत के बराबर विभाजन को पूरा करने के उद्देश्य से, की सहायता लेने की अनुमति दी जाए; और*
>
> *"ग. कोई अन्य राहत जिसे यह माननीय न्यायालय वर्तमान मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में उचित और समुचित समझे।"*

3. इस आवेदन पर नोटिस 06.02.2024 को जारी की गई थी; जिसके बाद प्रत्यर्थीगण द्वारा दिनांक 16.02.2024 को जवाब दाखिल किया गया है।

4. न्यायालय ने अपीलकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री पी.वी. कपूर और प्रत्यर्थीगण की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री रोहित कुमार को सुना।

5. अधिवक्तागण ने आवेदन के साथ अपनी-अपनी प्रस्तुतियों का लिखित सारांश भी दाखिल किए।

<u>अपीलकर्ता की प्रस्तुतियाँ</u>

6. श्री कपूर ने प्रस्तुत किया कि चूंकि दिनांक 10.01.2024 के निर्णय के द्वारा, इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि अपीलकर्ता को संपत्ति संख्या सी-316, डिफेंस कॉलोनी, नई दिल्ली ('विषयगत संपत्ति') की पहली मंजिल के ऊपर बरसाती कमरे और छत पर समान अधिकार है, इसलिए यह न्यायालय विषयगत संपत्ति को माप और सीमांकन के आधार पर विभाजित करने के लिए एक स्थानीय आयुक्त की नियुक्ति का परिणामी आदेश भी पारित कर सकता है, जो कि विद्वान ए.डी.जे. के समक्ष दायर वाद में की गई प्रार्थनाओं में से एक थी।

7. यह बताया गया है कि वाद में किए गए दावे निम्नानुसार थे :

"(क) परिसर संख्या सी-316, डिफेंस कॉलोनी, नई दिल्ली की दूसरी मंजिल पर स्थित बरसाती और छत को वादी और प्रतिवादी के बीच माप और सीमांकन करके बराबर हिस्सों में विभाजित करने का डिक्री।

"(ख) बरसाती और दूसरी मंजिल की छत पर वादी के अधिकारों और हकों तथा हितों को बराबर हिस्सों में घोषित करने की डिक्री।

"(ग) उक्त बरसाती और छत को वादी और प्रतिवादी के बीच बराबर हिस्सों में बांटने और विभाजन करने तथा संबंधित भाग के सुविधाजनक उपयोग और उपभोग के लिए एक स्कीम तैयार करने के लिए विभाजन आयुक्त की नियुक्ति करें।

"(घ) लागत।

"(ङ) इस तरह की आगे या अन्य राहतें जिन्हें यह माननीय न्यायालय उचित और समुचित समझे।

8. वर्तमान अपील में की गई प्रार्थनाओं पर भी ध्यान दिया गया है, जो इस प्रकार हैं:

"क. विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा वाद सं. 382/09/95 में दिनांक 20.09.2010 को पारित आक्षेपित निर्णय को अपास्त करें;

"ख. अपीलकर्ता द्वारा दायर वाद को डिक्री करें और वाद में अपीलकर्ता द्वारा मांगी गई राहत प्रदान करें, जिसे दिनांक 20.09.2010 के आक्षेपित निर्णय द्वारा खारिज कर दिया गया है;

"ग. वर्तमान मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए अपीलकर्ता के पक्ष में और प्रत्यर्थीगण के विरुद्ध ऐसे अन्य और उत्तरभावी आदेश(शों) पारित करें, जिसे यह माननीय न्यायालय उचित समझे।''

9. यह प्रस्तुत किया गया कि एक बार जब इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित कर दिया है कि अपीलकर्ता और प्रत्यर्थीगण प्रत्येक विषयगत संपत्ति में 50:50 हिस्से के हकदार हैं, तो यह अनिवार्य है कि एक स्थानीय आयुक्त को उनके हिस्सों के अनुसार विषयगत संपत्ति का

विभाजन करने के लिए नियुक्त किया जाए, जिसको विषयगत संपत्ति का माप और सीमांकन करने और विभाजित करने के लिए एक उचित रूप से वरिष्ठ वास्तुकार की सहायता लेने की अनुमति भी दी जा सकती है, जिसमें उसमें शामिल निर्माण भी शामिल है, ताकि पक्षकारगण विषयगत संपत्ति में अपने समान हिस्से का उपयोग कर सकें।

10. श्री कपूर प्रस्तुत किए कि चूंकि दिनांक 10.01.2024 के निर्णय के द्वारा, इस न्यायालय ने विद्वान ए.डी.जे. द्वारा दिए गए निर्णय को अपास्त कर दिया, और घोषणा की है कि वादी और प्रत्यर्थीगण विषयगत संपत्ति में 50:50 हिस्सेदारी के हकदार हैं, उसके अनुसरण में विभाजन के लिए एक प्रारंभिक डिक्री पारित करना होगा, जिसके बाद इस न्यायालय को अचल संपत्ति के वास्तविक विभाजन के लिए अधिकार-पत्र जारी करना आवश्यक होगा।

11. श्री कपूर ने सि.प्र.सं. के आदेश 20 नियम 18 और सि.प्र.सं. के आदेश 26 नियम 13 और 14 के प्रावधानों की ओर ध्यान आकर्षित किया, जो निम्नानुसार हैं :

> <u>सि.प्र.सं. का आदेश 20 नियम 18</u>
>
> *18. संपत्ति के विभाजन या उसमें किसी हिस्से के अलग कब्जे के वाद में डिक्री.–जिसमें न्यायालय संपत्ति के विभाजन या उसमें किसी हिस्से के अलग कब्जे के लिए डिक्री पारित करता है, तो –*

(1) यदि और जहाँ तक डिक्री सरकार को राजस्व के भुगतान के लिए निर्धारित की गई संपत्ति से संबंधित है, तो डिक्री संपत्ति में हितबद्ध विभिन्न पक्षकारगण के अधिकारों की घोषणा करेगी, किन्तु ऐसा विभाजन या पृथक्करण कलक्टर द्वारा, या कलक्टर द्वारा इस संबंध में प्रतिनियुक्त किसी राजपत्रित अधीनस्थ द्वारा, ऐसी घोषणा के अनुसार और धारा 54 के प्रावधानों के अनुसार किए जाने का निर्देश देगी;

(2) यदि और जहाँ तक ऐसी डिक्री किसी अन्य अचल संपत्ति या चल संपत्ति से संबंधित है, तो न्यायालय, यदि विभाजन या पृथक्करण के बिना आगे की जांच को आसानी से नहीं किया जा सकता है, तो संपत्ति में हितबद्ध विभिन्न पक्षकारगण के अधिकारों की घोषणा करते हुए तथा ऐसे अतिरिक्त निर्देश देते हुए, जो अपेक्षित हों, प्रारंभिक डिक्री पारित कर सकता है।

* * * * *

<u>सि.प्र.सं. का आदेश 20 नियम 18</u>

विभाजन करने के लिए अधिकार-पत्र

13. अचल संपत्ति का विभाजन करने के लिए अधिकार-पत्र–जहां विभाजन के लिए प्रारंभिक डिक्री पारित की गई है, वहां न्यायालय, किसी भी मामले में धारा 54 द्वारा उपबंधित नहीं किया गया है, ऐसे व्यक्ति को अधिकार-पत्र जारी कर सकता है जिसे उस डिक्री में घोषित अधिकारों के अनुसार विभाजन या पृथक्करण करने के लिए उचित समझता है।

14. आयुक्त की प्रक्रिया–(1) आयुक्त, ऐसी जांच के बाद, जो आवश्यक हो, संपत्ति को उतने हिस्सों में विभाजित करेगा जो उस आदेश द्वारा निर्देशित किए जा सकते हैं जिसके तहत अधिकार-पत्र जारी किया गया था, और पक्षकारगण को ऐसे हिस्सों को बाँटेगा, और यदि उक्त आदेश द्वारा इसके लिए प्राधिकृत किया गया हो, तो हिस्सों के मूल्य को बराबर करने के उद्देश्य से भुगतान की जाने वाली राशि का अधिनिर्णय कर सकता है।

(2) आयुक्त तब एक रिपोर्ट तैयार करेगा और उस पर हस्ताक्षर करेगा या आयुक्त (जहां अधिकार-पत्र एक से अधिक व्यक्तियों को जारी किया गया था और वे सहमत नहीं हो सकते हैं)

प्रत्येक पक्षकार के हिस्से को निर्धारित करते हुए और प्रत्येक हिस्से को (यदि उक्त आदेश द्वारा ऐसा निर्देशित किया गया है) माप और सीमांकन द्वारा अलग करते हुए अलग-अलग रिपोर्ट तैयार करेगा और उस पर हस्ताक्षर करेगा। ऐसी रिपोर्ट या रिपोर्ट्स अधिकार-पत्र के साथ संलग्न की जाएगी और न्यायालय को प्रेषित की जाएगी; और न्यायालय, रिपोर्ट या रिपोर्टों पर पक्षकारगण द्वारा की गई किसी भी आपत्ति को सुनने के बाद, उसे पुष्टि करेगा, उसमें परिवर्तन करेगा या उसे अपास्त कर देगा।

(3) जहां न्यायालय रिपोर्ट या रिपोर्टों की पुष्टि करता है या उसमें परिवर्तन करता है, वहां वह पुष्टि या परिवर्तन के अनुसार डिक्री पारित करेगा; किंतु जहां न्यायालय रिपोर्ट या रिपोर्टों को अपास्त करता है, वहां वह या तो नया अधिकार-पत्र जारी करेगा या ऐसा अन्य आदेश देगा, जो वह उचित समझेगा।

12. श्री कपूर ने ***शंकर बलवंत लोखंडे (मृतक) द्वारा वि,प्रति. बनाम चंद्रकांत शंकर लोखंडे और अन्य*** मामले में उच्चतम न्यायालय के फैसले पर भी भरोसा किया है, जिसमें फैसला इस प्रकार दिया गया है :

"4. आदेश 20, नियम 18 में संपत्ति के विभाजन या उसमें एक हिस्से के अलग कब्जे के लिए डिक्री पारित करने की परिकल्पना की गई है। उपनियम (2) महत्वपूर्ण है जिसमें यह प्रावधान किया गया है कि "यदि और जहां तक ऐसी डिक्री किसी अन्य अचल संपत्ति या चल संपत्ति से संबंधित है, तो न्यायालय, यदि विभाजन या पृथक्करण आगे की जांच के बिना सुविधाजनक रूप से नहीं किया जा सकता है, तो संपत्ति में हितबद्ध विभिन्न पक्षकारगण के अधिकारों की घोषणा करते हुए तथा आवश्यकतानुसार आगे ऐसे निर्देश देते हुए एक प्रारंभिक डिक्री पारित कर सकता है।" (जोर हमारा है) इस प्रकार, यह देखा जा सकता है कि <u>जहां डिक्री किसी भी अचल संपत्ति से संबंधित है और विभाजन या पृथक्करण को आगे की जांच के बिना आसानी से नहीं किया जा सकता है, तो न्यायालय को संपत्ति में हितधारक कई पक्षकारगण के अधिकारों की घोषणा करते हुए एक प्रारंभिक डिक्री पारित करने की आवश्यकता होती है। न्यायालय को</u>

इस संबंध में अपेक्षित और निर्देश देने का भी अधिकार है। विभाजन कार्यवाही में प्रारंभिक डिक्री, वाद में एक कदम है जो अंतिम डिक्री पारित होने तक जारी रहता है...

* * * * *

"8. यह देखा गया है कि विभाजन के लिए प्रारंभिक डिक्री पारित करने के बाद, डिक्री को अंतिम डिक्री के बिना प्रभावी नहीं बनाया जा सकता है। ... ..

* * * * *

"10. जैसा कि पहले निष्कर्ष निकाला गया है, प्रारंभिक डिक्री में घोषित हिस्सों के अनुसार संपत्तियों को विभाजित करने वाले पक्षकारगण के अधिकारों का निर्धारण करने के लिए कोई निष्पादन योग्य अंतिम डिक्री तैयार नहीं की गई है। प्रारंभिक डिक्री में केवल यह घोषित किया गया था कि पक्षकारगण के हिस्सों और संपत्तियों को इस निमित्त नियुक्त किए जाने वाले आयुक्त द्वारा उन हिस्सों के अनुसार विभाजित किया जाना चाहिए। निस्संदेह, कोई आयुक्त नियुक्त नहीं किया गया था और सभी से संबंधित कोई अंतिम आदेश पारित नहीं किया गया था।"

(जोर दिया गया)

13. विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने ***कट्टुकंडी एडथिल कृष्णन बनाम कट्टुकंडी एडथिल वल्सन*** में उच्चतम न्यायालय के हाल के फैसले का भी हवाला दिया है, जिसके प्रासंगिक अंश इस प्रकार हैं :

"30. उपरोक्त से यह स्पष्ट है कि प्रारंभिक डिक्री विभाजन के लिए पक्षकारगण के अधिकारों या हिस्सों की घोषणा करती है। एक बार जब हिस्सों की घोषणा कर दी गई हो और संपत्ति का वास्तविक विभाजन करने तथा विभाजित संपत्ति पर पक्षकारगण को अलग-अलग कब्जा देने के लिए आगे की जांच अभी भी बाकी हो, तो ऐसी जांच की जाएगी और आगे की जांच के परिणाम के अनुसार अंतिम डिक्री पारित की जाएगी। इस प्रकार, मूल रूप से, प्रारंभिक और अंतिम डिक्री के बीच अंतर यह है किः प्रारंभिक डिक्री केवल पक्षकारगण के

अधिकारों और हिस्सों की घोषणा करती है और प्रारंभिक डिक्री में दिए गए निर्देशों के अनुसार कुछ और जांच करने और संचालित करने के लिए जगह छोड़ती है और जांच किए जाने और पक्षकारगण के अधिकारों को अंततः निर्धारित करने के बाद, इस तरह के निर्धारण को शामिल करते हुए अंतिम डिक्री तैयार करने की आवश्यकता होती है।

*****

*"33. **हमारा विचार है कि एक बार विचारण न्यायालय द्वारा प्रारंभिक डिक्री पारित किए जाने के बाद, न्यायालय को स्वप्रेरणा से संज्ञान लेते हुए अंतिम डिक्री तैयार करने के लिए मामले को आगे बढ़ाना चाहिए।** प्रारंभिक आदेश पारित होने के बाद, विचारण न्यायालय को सि.प्र.सं. के आदेश XX नियम 18 के तहत कदम उठाने के लिए मामले को सूचीबद्ध करना होता है। न्यायालयों को मामले को अनिश्चित काल के लिए स्थगित नहीं करना चाहिए, जैसा कि वर्तमान मामले में किया गया है। एक अलग अंतिम डिक्री कार्यवाही दायर करने की भी आवश्यकता नहीं होती है। एक ही वाद में, न्यायालय को संबंधित पक्षकार को अंतिम डिक्री तैयार करने के लिए उचित आवेदन दायर करने की अनुमति देनी चाहिए। यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि वाद केवल तभी समाप्त होता है जब अंतिम डिक्री तैयार की जाती है। ... ..."*

(जोर दिया गया)

14. तदनुसार, श्री कपूर ने तर्क दिया कि ऐसा प्रतीत होता है कि दिनांक 10.01.2024 के निर्णय में यह टिप्पणी कि डिक्री शीट तैयार की जाए, वास्तव में विभाजन की *प्रारंभिक डिक्री* का संदर्भ है, जिसे अंतिम डिक्री में परिणत करने की आवश्यकता है, ताकि इसे प्रभावी बनाया जा सके, जो एक स्थानीय आयुक्त को एक वास्तुकार की सहायता से माप और

सीमांकन द्वारा विषयगत संपत्ति का विभाजन करने के लिए नियुक्त करने के बाद किया जा सकता है।

15. पूर्णता के लिए यह ध्यान दिया जा सकता है कि अपीलकर्ता ने ऊपर निर्दिष्ट निर्णयों के अलावा, निर्णयों के खिलाफ उल्लिखित तर्कों के समर्थन में निम्नलिखित निर्णयों का भी हवाला दिया है :

15.1. इस बिंदु पर कि यह आवेदन का सार है जो मायने रखता है, न कि आवेदन में उल्लिखित नामकरण या प्रावधान, अपीलकर्ता ने उद्धृत किया :

15.1.1. ***एन. मणि बनाम संगीता थिएटर और अन्य***,

15.1.2. ***किरण गिरहोत्रा और अन्य बनाम राज कुमार और अन्य,***

15.1.3. ***खाद्य शिल्प संस्थान बनाम रामेश्वर शर्मा और अन्य,***

15.1.4. ***जगदीश बलवंतराव अभ्यंकर बनाम महाराष्ट्र राज्य और अन्य, और***

15.1.5. ***अध्यक्ष चतुर्भुज शर्मा शिक्षण संस्थान महाविद्यालय समिति ओरई और अन्य बनाम अवध बिहारी तिवारी और अन्य।***

15.2. इस बिंदु पर कि न्यायालय को विभाजन की प्रारंभिक डिक्री पारित करने के बाद माप और सीमांकन द्वारा विभाजन करने के लिए

एक स्थानीय आयुक्त नियुक्त करने की शक्ति है, अपीलार्थी निम्नलिखित पर भरोसा किया हैः

15.2.1. ***उमा देवी मृतक द्वारा वि.प्रति. बनाम शिवराज कृष्ण गुप्ता,*** और

15.2.2. ***गंगाधरन बनाम जेम्स जोसेफ।***

15.3. इस बिंदु पर कि न्यायालय प्रारंभिक डिक्री पारित करने के बाद पदकार्य-निवृत्त नहीं हो जाता है, अपीलकर्ता ने उद्धृत किया:

15.3.1. ***घंटेशर घोष बनाम मदन मोहन घोष।***

<u>प्रत्यर्थीगण की प्रस्तुतियाँ</u>

16. दूसरी ओर, दिनांक 16.02.2024 के उत्तर के द्वारा वर्तमान आवेदन का विरोध करते हुए, श्री कुमार ने आपत्ति जताई है कि अपीलकर्ता सि.प्र.सं. की धारा 151 के तहत वर्तमान आवेदन दायर नहीं कर सकता है, क्योंकि, प्रत्यर्थीगण के अनुसार, दिनांक 10.01.2024 के निर्णय का स्पष्टीकरण मांगने की आड़ में, अपीलकर्ता वास्तव में उस निर्णय में संशोधन और *परिवर्धन* करने की मांग कर रहा है जो विधि में अस्वीकार्य है।

17. श्री कुमार सि.प्र.सं. के आदेश 20 नियम 3 सहपठित उसकी धारा 152 की ओर ध्यान आकर्षित किया, जिसके प्रावधानों को नीचे उल्लिखित किया गया है :

सि.प्र.सं. का आदेश 20 नियम 3

3. निर्णय पर हस्ताक्षर किया जाना– निर्णय पर तारीख अंकित होगी और न्यायाधीश द्वारा उसे उद्घोषित करते समय खुले न्यायालय में उस पर हस्ताक्षर किए जाएंगे और एक बार हस्ताक्षर किए जाने पर, बाद में उसमें धारा 152 द्वारा उपबंधित के सिवाय या पुनर्विलोकन के समय कोई परिवर्तन या परिवर्धन नहीं किया जाएगा।

* * * * *

सि.प्र.सं. की धारा 152

152. निर्णयों, डिक्रीयों या आदेशों में संशोधन।– निर्णयों, डिक्रीयों या आदेशों में गणित संबंधी या लेखन की गलती या कोई आकस्मिक भूल या चूक से उत्पन्न त्रुटियों को न्यायालय द्वारा किसी भी समय अपने स्वयं के प्रस्ताव द्वारा या किसी भी पक्षकारगण के आवेदन पर ठीक किया जा सकता है।

(जोर दिया गया)

18. तदनुसार, प्रत्यर्थीगण की ओर से यह तर्क दिया गया कि सि.प्र.सं. में, एक बार निर्णय उद्घोषित करने के बाद, उसमें किसी भी प्रकार के परिवर्धन, परिवर्तन या संशोधन की अनुमति नहीं देता है, सिवाय उसकी धारा 152 के तहत अनुमेय सीमा तक या सि.प्र.सं. के आदेश 47 सहपठित उसकी धारा 114 के तहत पुनर्विलोकन के तहत, जिनके प्रावधान अपने दायरे में अत्यंत सीमित हैं। यह तर्क दिया गया कि सि.प्र.सं. की धारा 152 किसी निर्णय, डिक्री या आदेश में केवल *गणित संबंधी या लेखन की गलतियों के सुधार की अनुमति देती है* और धारा 114 केवल किसी निर्णय या आदेश में स्पष्टत: कुछ त्रुटि के आधार पर पुनर्विलोकन की अनुमति देती है, बशर्ते कि कोई अपील न की गई हो

या ऐसे निर्णय या आदेश के विरुद्ध अपील न की गई हो। अधिवक्ता ने पुनर्विलोकन से संबंधित दिल्ली उच्च न्यायालय के नियमावली के नियम 10 अध्याय-I वॉल्यूम-V के प्रावधानों की ओर भी ध्यान आकर्षित किया, ताकि यह प्रस्तुत किया जा सके कि वर्तमान मामले में पुनर्विलोकन के लिए उपलब्ध आधार मौजूद नहीं हैं, और न ही अपीलकर्ता द्वारा आवश्यकतानुसार आग्रह किया गया है।

19. श्री कुमार प्रस्तुत किए कि वर्तमान मामले में, आवेदन सि.प्र.सं. की धारा 152 के तहत नहीं बल्कि सि.प्र.सं. की धारा 151 के तहत दायर किया गया है और कोई पुनर्विलोकन नहीं की गई है। वह इस बात पर जोर दिया कि अपीलकर्ता को धारा 151 के तहत वर्तमान आवेदन दायर करके सि.प्र.सं. के प्रावधानों को परिवंचना करने की अनुमति नहीं दी जा सकती है।

20. श्री कुमार ने प्रस्तुत किया कि वास्तव में, इस न्यायालय ने दिनांक 10.01.2024 के फैसले में कहीं भी यह अभिनिर्धारित नहीं किया है कि अपीलकर्ता और प्रत्यर्थीगण का विषयगत संपत्ति में या उस भूमि में समान हिस्सा होगा जिस पर भवन स्थित है। उन्होंने प्रस्तुत किया कि इसलिए निर्णय विभाजन के प्रारंभिक डिक्री के प्रति निर्णय नहीं है।

21. श्री कुमार ने यह भी तर्क दिया कि दिनांक 10.01.2024 को निर्णय उद्घोषित करने के बाद, यह न्यायालय *पदकार्य-निवृत्त* बन गई है और

इसलिए, और इसलिए, इस न्यायालय द्वारा आगे कोई आदेश, निर्णय को संशोधित करने वाला आदेश तो दूर की बात है, पारित नहीं किया जा सकता। हालांकि, यह ***दलील शुब करण बुबना बनाम सीता सरन बुबना एवं अन्य*** में प्रतिपादित विधि की स्थिति से स्पष्ट रूप से अस्वीकृत हो जाती है, जहां उच्चतम न्यायालय का कहना है कि विभाजन की प्रारंभिक डिक्री से *वाद का निपटान नहीं हो जाता है, और वाद तब तक लंबित रहता है* जब तक कि माप और सीमांकन करके विभाजन नहीं हो जाता और अंतिम डिक्री पारित नहीं हो जाती है। नतीजतन, प्रारंभिक डिक्री पारित करने पर, यह न्यायालय वर्तमान मामले में पदकार्य-निवृत्त नहीं बना है।

22. प्रत्यर्थीगण की ओर से दी गई प्रस्तुतियों के समर्थन में, निम्नलिखित न्यायिक पूर्व निर्णय उद्धृत किया गया है :

22.1. इस बिंदु पर कि निर्णय 'अंतिम' है और न्यायाधीश निर्णय उद्घोषित करने, हस्ताक्षर करने और दिनांकित करने के बाद पदकार्य-निवृत्त हो जाता है और उसके बाद निर्णय को संशोधित नहीं किया जा सकता है, प्रत्यर्थीगण ने उद्धृत किया :

22.1.1. ***भारतीय स्टेट बैंक अन्य अन्य*** **बनाम** ***एस.एन. गोयल।***

22.2. इस बिंदु पर कि एक बार निर्णय पारित हो जाने के बाद न्यायालय आकस्मिक चूक या गलतियों को सुधारने के अलावा सि.प्र.सं. की धारा 152 के तहत निर्णय की निबंधनों में बदलाव नहीं कर सकता है; लेकिन मामले के गुणागुण को प्रभावित करने वाली चूक को सुधारा नहीं जा सकता, प्रत्यर्थीगण ने उद्धृत कियाः

22.2.1. ***द्वारका दास बनाम मध्य प्रदेश राज्य और अन्य***

22.2.2. ***बिजय कुमार सरावगी बनाम झारखंड राज्य***

22.2.3. ***सुपरटेक लिमिटेड बनाम एमराल्ड कोर्ट ओनर रेजिडेंट वेलफेयर एसोसिएशन एवं :***

22.2.4. ***वेंकट रेड्डी और अन्य बनाम पेथी रेड्डी***

22.2.5. ***राष्ट्रीय मानसिक स्वास्थ्य और तंत्रिका विज्ञान संस्थान बनाम सी. परमेश्वर***

<u>विवेचन और निष्कर्ष</u>

23. आवेदन की सामग्री और जवाब पर विचार करने पर; और अधिवक्तागण द्वारा की गई प्रस्तुतियों के आधार पर, निम्नलिखित निष्कर्ष निकलते हैं:

23.1. स्पष्ट रूप से, विद्वान ए.डी.जे. के समक्ष दायर वाद के द्वारा, अपीलार्थी (उन कार्यवाहियों में वादी) ने विभाजन की प्रारंभिक

डिक्री की मांग की थी; इसके बाद एक स्थानीय आयुक्त की नियुक्ति के लिए निर्देश दिया गया था ताकि विषयगत संपत्ति का विभाजन किया जा सके और पक्षकारगण द्वारा अपने-अपने हिस्सों पर अलग-अलग कब्जा किया जा सके।

23.2. विद्वान ए.डी.जे. द्वारा दिनांक 20.09.2010 को दिए गए निर्णय और डिक्री को वाद में किए गए अन्य दावों को संबोधित किए बिना, वर्तमान कार्यवाही में इस न्यायालय द्वारा 10.01.2024 को दिए गए निर्णय के द्वारा अपास्त कर दिया गया है।

23.2. प्रत्यर्थीगण की ओर से जो प्रस्तुत किया गया है, उसके विपरीत, दिनांक 10.01.2024 के फैसले में, इस न्यायालय ने निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया है:

> *"34.3. जहाँ तक भूमि पर अधिकारों का संबंध है, उन्हें निम्नलिखित दो तरीकों में से किसी एक के द्वारा वसीयत किया जा सकता है। सबसे पहले, वसीयत के दूसरे पैरा में शामिल करके, जिसमें वसीयतकर्ता की सभी संपत्तियों और परिसंपत्तियों को उसकी दो बेटियों को विरासत में दिया गया था, किसी के पक्ष में कोई हिस्सा निर्दिष्ट किए बिना, जिसका <u>अर्थ है कि भूमि पर अधिकार दोनों को समान रूप से मिले।</u> दूसरा, यह कहा जा सकता है कि वसीयतकर्ता ने अपनी वसीयत में भूमि की वसीयत के बारे में कुछ नहीं कहा; <u>इस स्थिति में, भूमि पर अधिकार पुनः उसकी दो बेटियों को समान रूप से मिलेंगे।</u> हालाँकि, जहाँ तक निर्मित भाग का संबंध है, वसीयत के चौथे पैरा में, वसीयतकर्ता ने निर्मित भागों को ऊपर उल्लिखित तरीके से विशेष रूप से वसीयत किया है।*

> *"34.4. हालाँकि वसीयतकर्ता के जीवनकाल में बरसाती कमरा और पहली मंजिल की छत मौजूद थी, लेकिन उन्होंने न तो अपनी वसीयत में उन हिस्सों का उल्लेख किया और न ही उन्होंने इस संबंध में कोई कोडिसिल बनाया। <u>तदनुसार वसीयत बरसाती कमरे/छत के संबंध में कुछ नहीं कहा गया है। इस स्थिति में, बरसाती कमरा/छत अपीलकर्ता और प्रतिवादी/प्रत्यर्थीगण को समान रूप से निर्वसीयतता के मिलेगी।</u> वसीयत की यह व्याख्या तर्क पर भी आधारित है, क्योंकि यह अकल्पनीय है कि वसीयतकर्ता ने सोचा होगा कि भूमि पर निर्माण उसके जीवनकाल के दौरान, आने वाले सभी समय के लिए वैसा ही रहेगा; और यह कि उसकी दो बेटियों को संपत्ति पर आगे कोई निर्माण करने की कभी आवश्यकता नहीं होगी, या उन्हें अनुमति नहीं दी जाएगी। इस तरह की व्याख्या को पूरी तरह से सहज ज्ञान के विपरीत और व्यावहारिक ज्ञान और तर्क के विपरीत होने के कारण खारिज कर दिया जाना चाहिए।"*

(जोर दिया गया)

23.4. दिनांक 10.01.2024 के निर्णय के पूर्वगामी पैराग्राफों को स्पष्ट रूप से पढ़ने पर, यह स्पष्ट है कि इस न्यायालय ने *भूमि* के साथ-साथ *विषयगत संपत्ति* दोनों में अपीलकर्ता (एक तरफ) और प्रत्यर्थीगण (दूसरी तरफ) के हिस्सों का स्पष्ट रूप से निर्णय किया गया है, यह अभिनिर्धारित करते हुए कि उक्त पक्षकारगण में से प्रत्येक का दोनों में समान हिस्सा है। इसे ध्यान में रखते हुए, प्रत्यर्थी का यह तर्क कि दिनांक 10.01.2024 का निर्णय विषयगत संपत्ति या भूमि में पक्षकारगण के हिस्सों का निर्णय नहीं करता है, पूरी तरह से गलत धारणा है और इस बात की अज्ञानता पर आधारित है कि निर्णय द्वारा सटीक रूप से क्या

निर्णीत किया गया है। इसलिए दिनांक 10.01.2024 का निर्णय इस मामले में प्रारंभिक डिक्री की ओर निर्णय है।

23.5. अपीलकर्ता की ओर से उद्धृत आदेशों को पढ़ने से यह स्पष्ट होता है कि विभाजन को प्रभावी बनाने के लिए विभाजन के लिए प्रारंभिक डिक्री के बाद अंतिम डिक्री अवश्य होनी चाहिए। यह भी सुस्थापित विधि है कि प्रारंभिक डिक्री केवल संपत्ति में हितबद्ध पक्षकारगण के अधिकारों की घोषणा करती है, जबकि अंतिम डिक्री इसे निष्पादन योग्य रूप देती है, तथा प्रारंभिक डिक्री द्वारा घोषित हिस्सों के अनुसार संपत्ति को विभाजित करती है। यह *शंकर बलवंत लोखंडे* (पूर्वोक्त) मामले में उच्चतम न्यायालय द्वारा विधि का स्पष्ट प्रतिपादन है, जिसे *कट्टुकंडी एडथिल कृष्णन* (पूर्वोक्त) में दोहराया गया है।

23.6. वर्तमान आवेदन में दावा की गई राहत विषयगत संपत्ति के विभाजन के लिए प्रारंभिक डिक्री को प्रभावी बनाने तक सीमित है जो दिनांक 10.01.2024 के फैसले के पैरा 34.4 की विषय-वस्तु थी। सि.प्र.सं. का आदेश 20 नियम 18 और आदेश 26 नियम 13 के प्रावधानों ने उस स्कीम को निर्धारित किया है जिसके तहत विभाजन का प्रारंभिक आदेश पारित करने के बाद, न्यायालय अपेक्षित जांच करने और संपत्ति को न्यायालय द्वारा निर्देशित

हिस्सों में विभाजित करने तथा संबंधित पक्षकारगण को ऐसे हिस्से आवंटित करने के लिए एक स्थानीय आयुक्त को नियुक्त करने का अधिकार है।

24. *शुभ करण बुबना* (पूर्वोक्त) में उच्चतम न्यायालय की टिप्पणियां भी प्रासंगिक हैं :

> *"7. किसी हिस्से के विभाजन या पृथक्करण के वाद में, प्रार्थना न केवल वाद संपत्तियों में वादी के हिस्से की घोषणा के लिए होती है, बल्कि उसके हिस्से को माप और सीमांकन के आधार पर विभाजित करने के लिए भी होती है। इसमें तीन मुद्दे शामिल हैं:*
>
> *(i) क्या विभाजन की मांग करने वाले व्यक्ति का वाद संपत्ति/संपत्तियों में कोई हिस्सा या हित है;*
>
> *(ii) क्या वह विभाजन और अलग अधिकार की राहत का हकदार है; और*
>
> *(iii) संपत्ति/संपत्तियों को कैसे और किस तरीके से माप और सीमांकन करके विभाजित किया जाना चाहिए?*
>
> *किसी हिस्से के विभाजन या पृथक्करण के वाद में, न्यायालय पहले चरण में यह तय करता है कि क्या वादी का वाद संपत्ति में हिस्सा है और क्या वह विभाजन और अलग कब्जे का हकदार है। इन दोनों मुद्दों पर निर्णय **न्यायिक कृत्य** का प्रयोग है और इसके परिणामस्वरूप पहले चरण का निर्णय होता है जिसे संहिता के आदेश 20 नियम 18(1) के तहत "डिक्री" कहा जाता है और संहिता के आदेश 20 नियम 18(2) के तहत "प्रारंभिक डिक्री" कहा जाता है। माप और सीमांकन द्वारा परिणामी विभाजन, जिसे **लिपिक वर्गीय या प्रशासनिक कार्य** माना जाता है, जिसके लिए वास्तविक निरीक्षण, माप, गणना और विभाजन के विभिन्न क्रमपरिवर्तन/संयोजन/विकल्पों पर विचार करने की आवश्यकता होती*

है, नियम 18(1) के तहत कलक्टर को निर्दिष्ट किया जाता है और यह नियम 18(2) के तहत अंतिम डिक्री का विषय-वस्तु होता है।

* * * * *

"17. एक बार जब कोई न्यायालय प्रारंभिक डिक्री पारित कर देती है, तो यह सुनिश्चित करना न्यायालय का कर्तव्य है कि मामला कलक्टर या आयुक्त को विभाजन के लिए भेजा जाए, जब तक कि पक्षकारगण स्वयं विभाजन के तरीके के बारे में सहमत न हों। सामान्यतः यह कर्तव्य न्यायालय को प्रारंभिक डिक्री की निरंतरता के रूप में स्वयं ही निभाना पड़ता है। कभी-कभी किसी अपील के लंबित होने या अन्य परिस्थितियों के कारण, न्यायालय नियम 18(1) के तहत डिक्री या नियम 18(2) के तहत प्रारंभिक डिक्री पारित करता है और मामला केवल तभी पुनः शुरू होने के लिए भंडारकरण में जाता है, जब किसी भी पक्षकार द्वारा आवेदन किया जाता है, जिसमें लंबित मुद्दे की ओर ध्यान आकर्षित किया जाता है और संपत्ति के वास्तविक विभाजन के लिए मामले को कलक्टर या आयुक्त को निर्दिष्ट करने की आवश्यकता होती है। चाहे जैसी भी स्थिति हो।

*****

"18.2. अचल संपत्तियों (भू-राजस्व देने वाली कृषि भूमि को छोड़कर) अर्थात भवनों, भूखंडों आदि या चल संपत्तियों के संबंध में:

(i) जहां न्यायालय किसी भी आयुक्त की सहायता के बिना आसानी से और आगे की जांच के बिना विभाजन कर सकता है, या जहां पक्षकार विभाजन के तरीके पर सहमत होते हैं, वहां न्यायालय एकल डिक्री पारित करेगा जिसमें कई पक्षकारगण के अधिकारों की घोषणा करने वाली प्रारंभिक डिक्री और वाद संपत्तियों को माप और सीमांकन से विभाजित करने वाली अंतिम डिक्री भी शामिल होगी।

(ii) जहां आगे की जांच के बिना माप और सीमांकन द्वारा विभाजन नहीं किया जा सकता है, वहां न्यायालय संपत्ति के हितबद्ध पक्षकारगण के अधिकारों

की घोषणा करते हुए प्रारंभिक डिक्री पारित करेगी और विभाजन को प्रभावित करने के लिए आगे के निर्देश देगी। ऐसे मामलों में, आम तौर पर आयुक्त (आमतौर पर इंजीनियर, नक़्शानवीस, वास्तुकार या अधिवक्ता) को विभाजित की जाने वाली संपत्ति की वास्तविक रूप से जांच करने और विभाजन के तरीके का सुझाव देने के लिए नियुक्त किया जाता है। इसके बाद न्यायालय रिपोर्ट पर पक्षकारगण को सुनती है, और माप और सीमांकन द्वारा विभाजन के लिए अंतिम डिक्री पारित करती है।

प्रारंभिक डिक्री द्वारा घोषित अधिकारों के अनुसार विभाजन या पृथक्करण करने का कार्य (गैर-कृषि अचल संपत्तियों और चल के संबंध में) एक आयुक्त को सौंपा गया है, क्योंकि इसमें संपत्ति का निरीक्षण और व्यावहारिक उपयोगिता और साइट की स्थितियों के संबंध में विभिन्न विकल्पों की जांच शामिल है। जब आयुक्त विभाजन के तरीके के बारे में अपनी रिपोर्ट देता है, तो रिपोर्ट में निहित प्रस्तावों पर न्यायालय द्वारा विचार किया जाता है; और रिपोर्ट पर आपत्तियों को सुनने के बाद, यदि कोई हो, तो न्यायालय अंतिम डिक्री पारित करता है, जिसके तहत वाद में मांगी गई राहत संपत्ति को माप और सीमांकन द्वारा अलग करके दी जाती है। यह भी संभव है कि यदि संपत्ति का उचित विभाजन न किया जा सके, तो न्यायालय उसकी विक्रय और घोषित हिस्सों के अनुसार आय के वितरण का निर्देश दे सकता है।

"18.3. चूँकि अधिकारों या हिस्सों की घोषणा के विभाजन के वाद में केवल पहला चरण है, इसलिए प्रारंभिक डिक्री का वाद के निपटान पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। वाद तब तक लंबित रहता है जब तक कि अंतिम डिक्री पारित करके विभाजन, अर्थात् माप और सीमांकन के आधार पर विभाजन नहीं हो जाता। प्रारंभिक डिक्री के अनुसार विभाजन को प्रभावी करने वाली अंतिम डिक्री तैयार करने के लिए आवश्यक कदम उठाने हेतु न्यायालय से अनुरोध करने वाला आवेदन, न तो निष्पादन के लिए आवेदन है (जो कि परिसीमा

अधिनियम की धारा 136 के अंतर्गत आता है) और न ही एक नई राहत की मांग करने वाला आवेदन है (जो कि परिसीमा अधिनियम की धारा 137 के अंतर्गत आता है)। यह न्यायालय के लिए केवल स्मरण-पत्र है कि वह एक आयुक्त को नियुक्त करने, रिपोर्ट प्राप्त करने और लंबित वाद में अंतिम डिक्री तैयार करने के अपने कर्तव्य का पालन करे ताकि वाद को उसके तार्किक निष्कर्ष पर ले जाया जा सके। ।

* * * * *

"20. दूसरी ओर, विभाजन वाद में प्रारंभिक डिक्री केवल वाद के एक भाग का फैसला करते हैं और इसलिए अंतिम डिक्री पारित करने के लिए आवेदन केवल लंबित वाद में आवेदन है, जो आगे की प्रगति की मांग करता है। विभाजन के वाद में, एक प्रारंभिक डिक्री हो सकती है जिसके बाद एक अंतिम डिक्री हो सकती है, या एक डिक्री हो सकती है जो प्रारंभिक डिक्री और अंतिम डिक्री का संयोजन है या जिसके लिए न्यायालय को कुछ और कदम उठाने पड़ते हैं। ***वास्तव में, विभाजन वाद में अंतिम डिक्री के लिए कई आवेदन अनुज्ञेय हैं। विभाजन वाद में डिक्री सभी सह-स्वामियों के लाभ को सुनिश्चित करती है और इसलिए, कभी-कभी यह कहा जाता है कि विभाजन डिक्री में वास्तव में कोई निर्णीत ऋणी नहीं होता है।"***

(जोर दिया गया)

25. अब, सि.प्र.सं. की धारा 152 न्यायालय को, या तो अपने स्वयं के प्रस्ताव पर या किसी पक्षकार द्वारा आवेदन करने पर, निर्णय, डिक्री या आदेश में न केवल गणित संबंधी या लेखन की गलतियों को सुधारने का अधिकार देती है, *बल्कि किसी भी आकस्मिक भूल या चूक से उत्पन्न होने वाली किसी भी त्रुटि को भी सुधारने का भी अधिकार देती है।* प्रावधान में कहा गया है कि न्यायालय किसी भी समय इस तरह की त्रुटि को ठीक कर सकती है।

26. इस स्तर पर, इस बिंदु पर विधि का संक्षिप्त संदर्भ दिया जा सकता है।

27. ***पंजाब राज्य बनाम दर्शन सिंह*** के मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने कहा:

> *"12. धारा 152 निर्णयों, डिक्रीयों या आदेशों में गणित संबंधी या लेखन की गलतियों या किसी आकस्मिक भूल या चूक से उत्पन्न त्रुटियों में सुधार का प्रावधान करती है। **इस शक्ति का प्रयोग न्यायालय द्वारा अपने लिपिकवर्गीय कार्यों में की गई गलतियों को सुधारने के लिए किया जाता है, तथा निर्णय, डिक्री या आदेश के बाद प्रभावी न्यायिक आदेश पारित करने के लिए नहीं किया जाता है।** विधि की सुस्थापित स्थिति यह है कि निर्णय, डिक्री या आदेश के पारित होने के बाद, यह उसी के संबंध में प्रदान किए गए उपचार के किसी भी और पथ के अधीन अंतिम हो जाता है और वही न्यायालय या अधिकरण, केवल विचार परिवर्तन पर, पुनर्विलोकन के द्वारा, यदि क़ानूनी रूप से इसके लिए विशेष रूप से प्रदान किया गया है और उसमें प्रदान की गई शर्तों या सीमाओं के अधीन है, तो पहले पारित निर्णयों, डिक्रीयों और आदेशों की निबंधनों को बदलने का हकदार नहीं है। संहिता की धारा 152 के अंतर्गत शक्तियों को न तो पुनर्विलोकन की शक्ति के समतुल्य माना जा सकता है, न ही इसे पुनर्विलोकन के समान कहा जा सकता है, या यहां तक कि यह भी कहा जा सकता है कि यह पूर्व में दिए गए निर्णय के परिणाम के बाद, उसकी संपूर्णता या उसके किसी भाग या भाग के संबंध में, संबंधित न्यायालय को आड में आदेश देने के लिए प्रेरित करती है। जिन सुधारों पर विचार किया गया है, वे केवल आकस्मिक चूक या गलतियों को सुधारने के लिए हैं, न कि उन सभी चूक और गलतियों को जो निर्णय, डिक्री या आदेश पारित करते समय न्यायालय द्वारा की गई हों। जिन सुधारों पर विचार किया गया है, वे केवल आकस्मिक चूक या गलतियों को सुधारने के लिए हैं, न कि उन सभी चूक और गलतियों को जो निर्णय, डिक्री या आदेश पारित करते समय न्यायालय द्वारा की गई हों। जिस चूक को सुधारने की मांग की गई है, जो मामले के गुणागुण से संबंधित है, वह धारा 152 के दायरे से बाहर है, जैसे कि वह पहली बार इसकी जाँच कर रहा हो, जिसके लिए पीड़ित पक्ष के लिए उचित उपाय, यदि कोई भी हो, तो उच्च for के समक्ष अपील या संशोधन दायर करना है या उसी फोरम के समक्ष समीक्षा आवेदन करना है, जो*

ऐसी समीक्षा के संबंध में सीमाओं के अधीन है। इसका तात्पर्य यह है कि इस धारा को किसी ऐसी चूक को सुधारने के लिए लागू नहीं किया जा सकता है जो जानबूझकर की गई हो, चाहे वह कितनी भी गलत क्यों न हो। ....

*"13. संहिता की धारा 152 के तहत प्रावधान का आधार सूक्ति "न्यायालय के कार्य से किसी की हानि नहीं होती है", अर्थात न्यायालय का कोई कार्य किसी भी व्यक्ति पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं डालेगा, पर आधारित है। फ्रीमैन बनाम ट्राना [12 सी.बी. 406 : 138 ई.आर. 964] (ई.आर. पृ. 967) में जे. क्रेसवेल ने कहा है कि सूक्ति "न्याय और अच्छी समझ पर आधारित है और विधि के प्रशासन के लिए एक सुरक्षित और निश्चित मार्गदर्शन प्रदान करता है।" **न्यायालय की अनजाने में हुई गलती जो किसी भी पक्षकार के पक्ष को प्रतिकूल रूप से प्रभावित कर सकती है, केवल और केवल उसी को ही सुधारा जा सकता है।** ....."*

(जोर दिया गया)

28. विधिक प्रक्रिया के उद्देश्य को याद रखना भी महत्वपूर्ण है कि न्याय प्रदान करना है, न्याय को आगे बढ़ाना है, न कि उसे बाधित करना है। ***संभाजी और अन्य* बनाम *गंगाबाई और अन्य***, में उच्चतम न्यायालय ने यही कहा है :

"9. प्रक्रिया के सभी नियम न्याय की दासी हैं। प्रक्रिया संबंधी विधि के प्रारूपक द्वारा प्रयुक्त भाषा उदार या कठोर हो सकती है, लेकिन तथ्य यह है कि प्रक्रिया निर्धारित करने का उद्देश्य न्याय के उद्देश्य को आगे बढ़ाना है। किसी प्रतिकूल प्रणाली में, किसी भी पक्षकार को सामान्य रूप से न्याय वितरण की प्रक्रिया में भाग लेने के अवसर से वंचित नहीं किया जाना चाहिए। जब तक कानून की स्पष्ट और विशिष्ट भाषा द्वारा बाध्य न किया जाए, तब तक सि.प्र.सं. या किसी अन्य प्रक्रिया संबंधी अधिनियम के प्रावधानों का इस तरह से अर्थ नहीं लगाया जाना चाहिए जिससे न्यायालय न्याय

के उद्देश्यों में असाधारण स्थितियों का सामना करने में असहाय हो जाए।

"10. <u>विधि के हाथों न्याय की मृत्यु एक न्यायाधीश की अंतरात्मा को परेशान करती है और कानून सुधारक पर तीखे प्रश्न उठाती है।</u>

"11. प्रक्रिया संबंधी विधि कुछ प्रणालियों में इतना हावी हो जाता है कि वह मूलभूत अधिकारों और मूलभूत न्याय को दबा देता है। मानवतावादी नियम यह है कि प्रक्रिया को विधिक न्याय की दासी होनी चाहिए, न कि उसकी मालकिन, जिसके कारण न्यायाधीशों को न्याय के विरुद्ध कार्य करने की अवशिष्ट शक्ति प्रदान करने पर विचार करने के लिए बाध्य होना पड़ता है, अन्यथा दुखद परिणाम पूरी तरह से असमान होगा। <u>न्याय विधिशास्त्र का लक्ष्य है, प्रक्रियागत होने के साथ-साथ मूलभूत भी।</u> किसी भी व्यक्ति को किसी भी प्रक्रिया में निहित अधिकार नहीं है। उसे केवल उसी न्यायालय द्वारा या उसके लिए अभियोजन या बचाव का अधिकार है जिसमें मामला लंबित है, और यदि संसद के किसी अधिनियम द्वारा प्रक्रिया के तरीके में बदलाव किया जाता है, तो उसे परिवर्तित तरीके के अनुसार कार्यवाही करने के अलावा कोई अन्य अधिकार नहीं है। प्रक्रिया संबंधी विधि को आम तौर पर अनिवार्य नहीं माना जाना चाहिए, <u>प्रक्रिया संबंधी विधि हमेशा न्याय के अधीन होता है और न्याय के लिए सहायक होता है। ऐसी किसी भी व्याख्या का पालन नहीं किया जाना चाहिए जो न्याय प्राप्त करने वाले को वंचित या निराश करती है।</u>

"12. प्रक्रिया संबंधी विधि अत्याचारी नहीं बल्कि सेवक होता है, बाधा नहीं बल्कि न्याय में सहायक है। प्रक्रिया संबंधी नुस्खा दासी है न कि मालकिन, न्याय प्रशासन में स्नेहक है न कि प्रतिरोधी।

29. पूर्वगामी चर्चा की पृष्ठभूमि में, स्पष्ट रूप से, वर्तमान मामले में जो हुआ है वह यह है कि इस न्यायालय ने विद्वान विचारण न्यायालय के फैसले को उलटते हुए यह अभिनिर्धारित किया कि "... *अपील सफल*

होती है ..." और इसके बाद यह निर्देश दिया गया है कि वाद डिक्रीत होती है।

30. दिनांक 10.01.2024 के निर्णय द्वारा, इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि अपीलार्थी/वादी (एक तरफ) और प्रत्यर्थीगण/प्रतिवादीगण (दूसरी तरफ) विषयगत संपत्ति अर्थात, सं. सी-316, डिफेंस कॉलोनी, नई दिल्ली परिसर की पहली मंजिल पर बरसाती कमरा और छत में एकसमान हिस्से के हकदार हैं। यह निर्णय *न्यायिक कृत्य* का परिणाम है, जिसने पक्षकारगण के मूल अधिकारों का निर्णय किया है और इसके परिणामस्वरूप प्रारंभिक डिक्री जारी किया गया है।

31. हालाँकि, इस न्यायालय ने अनजाने में, परिणामी निर्देश पारित करने से इनकार कर दिया है कि विषयगत संपत्ति को समान हिस्सों को कैसे विभाजित किया जाना है और पक्षकारगण को उनके संबंधित विभाजित हिस्सों को कब्जे में कैसे रखा जाना है, ताकि वे प्रारंभिक डिक्री के लाभों का उपभोग कर सकें।

32. यह सुस्थापित विधिक स्थिति है कि विभाजन के वाद में, यह निर्णय कि एक पक्षकार एक निश्चित अनुपात में अचल संपत्ति में हिस्से का हकदार है, *न्यायिक कृत्य* है और परिणामी संपत्ति का माप और सीमांकन करके विभाजन करना तथा पक्षकार को उसके विभाजित हिस्से पर कब्जा दिलाना *लिपिक वर्गीय और प्रशासनिक कार्य* है।

33. यह भी सुस्थापित स्थिति है कि एक बार जब कोई न्यायालय प्रारंभिक डिक्री पारित कर देती है, तो प्रारंभिक डिक्री पारित करने के परिणामस्वरूप, यह न्यायालय का कर्तव्य है कि वह संपत्ति के विभाजन को प्रभावी करने के लिए आगे के निर्देश दे। यह अभिनिर्धारित किया गया है कि प्रारंभिक डिक्री का वाद के निपटान पर प्रभाव नहीं पड़ता है, जो तब तक लंबित रहता है जब तक कि न्यायालय द्वारा अंतिम डिक्री पारित करके माप और सीमांकन द्वारा विभाजन नहीं हो जाता है।

34. यह भी देखा गया है कि, वास्तव में, विभाजन वाद में अंतिम डिक्री के लिए कई आवेदन अनुमत हैं, अन्य बातों के साथ-साथ चूंकि विभाजन डिक्री सभी सह-स्वामियों के लाभ के लिए होती है, और इस अर्थ में, विभाजन डिक्री में कोई वास्तविक "निर्णीत ऋणी" नहीं होता है।

35. इसके अलावा, सि.प्र.सं. की धारा 152 परिणामी आदेशों को पारित करने की अनुमति देती है बशर्ते इनमें मामले के गुणागुण से जुड़े किसी भी मामले का कोई ठोस न्यायनिर्णयन शामिल न हो।

36. वास्तव में उच्चतम न्यायालय ने कहा है कि न्यायालय की अनजाने में हुई गलती जिससे किसी पक्ष के हित पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है, को सि.प्र.सं. की धारा 152 के तहत प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए सुधारा जाना चाहिए।

37. विभाजन की प्रारंभिक डिक्री को प्रभावी बनाने के लिए परिणामी निर्देश पारित करना, ताकि इसे प्रभावी बनाया जा सके और यह सुनिश्चित किया जा सके कि अपीलकर्ता और प्रत्यर्थीगण को विषयगत संपत्ति में उनके संबंधित विभाजित हिस्सों पर कब्जा दिया जाए, केवल एक *लिपिक वर्गीय कार्य* है और इसमें किसी भी *न्यायनिर्णायिक* आदेश को पारित करना शामिल नहीं है (दिनांक 10.01.2024 के निर्णय के पारित होने के बाद)।

38. वास्तव में, इस तरह के परिणामी निर्देशों को पारित नहीं करना इस सर्वविदित सिद्धांत के विपरीत होगा कि प्रक्रिया के नियम न्याय के उद्देश्य को आगे बढ़ाने के लिए हैं और इसलिए न्यायिक प्रक्रिया के मुख्य लक्ष्य, अर्थात् न्याय प्रदान करने के अधीन होने चाहिए।

39. इस आपत्ति को दूर करने के लिए कि वर्तमान आवेदन सि.प्र.सं. की धारा 151 के तहत पोषणीय नहीं है, इस पर और अधिक प्रयास किए बिना, केवल यह देखा जा सकता है कि किसी आवेदन के मात्र नामकरण या गलत नामकरण का कोई महत्व नहीं है, *बशर्ते कि विधि किसी न्यायालय को आवेदन के माध्यम से मांगी गई राहत प्रदान करने का अधिकार देता है।* जब एक ओर हम कहते हैं कि विधिक प्रक्रिया न्याय को आगे बढ़ाने के लिए है, तो अपीलार्थी को केवल इस आधार पर रोक

देना कि आवेदन गलत प्रक्रियात्मक प्रावधान का उल्लेख करते हुए दायर किया गया है, न्याय व्यवस्था का उपहास करना होगा।

40. यह ऐसा मामला नहीं है जहां अपीलार्थी अपने अधिकारों को पुनः प्राप्त करने की मांग कर रहा है जो कि पहले ही दिनांक 10.01.2024 के निर्णय द्वारा तय किया गया है। यह भी मामला नहीं है कि अपीलार्थी तथ्य और/या विधि के किसी भी प्रश्न पर पुनः तर्क देना चाहता है। यह एक ऐसा मामला है जिसमें इस न्यायालय द्वारा दिनांक 10.01.2024 के निर्णय द्वारा पक्षकारगण के अधिकारों को घोषित करने के बाद, इस न्यायालय के संज्ञान में लाया गया है कि अनजाने में, विषयगत संपत्ति को माप और सीमांकन करके विभाजित करने की व्यवहार्यता का पता लगाने के लिए और सि.प्र.सं. के आदेश 20 नियम 18 और आदेश 26 नियम 13 और 14 के अनुसार आगे के निर्देशों के लिए स्थानीय आयुक्त की नियुक्ति का निर्देश देना छोड़ दिया गया है।

41. इसलिए, प्रत्यर्थीगण की ओर से यह तर्क कि आवेदन सि.प्र.सं. की धारा 151 के तहत पोषणीय नहीं है, जबकि विधि की दृष्टि से, प्रार्थना को सि.प्र.सं. की धारा 151 के तहत स्वीकार किया जा सकता है, केवल खारिज करने के लिए ही सुना जाना चाहिए।

42. प्रत्यर्थीगण द्वारा सि.प्र.सं. की धारा 151 के तहत आवेदन की गैर पोषणीयता के संबंध में की गई तीव्र आपत्ति, अस्पष्टता और विलंब का

प्रयास प्रतीत होती है, जिसका उद्देश्य और इरादा अपीलकर्ता को अपील में फैसले के लाभ का उपभोग करने से रोकना है।

43. प्रत्यर्थीगण की ओर से उठाई गई आपत्तियां फूहड़ लगती हैं और केवल दिनांक 10.01.2024 के फैसले के प्रभाव को नकारने का प्रयास है। उठाई गई आपत्तियों को इस तथ्य के आलोक में देखा जाना चाहिए कि प्रत्यर्थीगण ने अपीलार्थी को छोड़कर विषयगत संपत्ति पर कब्जा करना जारी रखा है और इसलिए यह दिनांक 10.01.2024 के निर्णय के परिणामों को विफल करने के लिए उनके हितों को आगे बढ़ाता है।

44. उपरोक्त के अनुक्रम में, आवेदन स्वीकार किया जाता है तथा उसका निपटान किया जाता है।

<u>नि.प्र.अ. 830/2010</u>

45. ऊपर जो अभिनिर्धारित किया गया है उसे देखते हुए, नि.प्र.अ. संख्या 830/2010 को उसकी मूल संख्या और स्थिति में बहाल किया जाता है।

46. चूंकि विषयगत संपत्ति सं. सी-316 डिफेंस कॉलोनी, नई दिल्ली के परिसर की पहली मंजिल पर *बरसाती* कमरा और छत शामिल है, जिसमें अपीलकर्ता (एक ओर) और प्रत्यर्थीगण (दूसरी ओर एक साथ) को एकसमान हिस्सों का हकदार अभिनिर्धारित किया गया है, ऐसा प्रतीत होता है कि विषयगत संपत्ति में उनके संबंधित हिस्सों का

विभाजन या अलग-अलग कब्जा आगे की जांच के बिना सुविधाजनक रूप से नहीं किया जा सकता है।

47. तदनुसार, यह स्पष्ट किया जाता है कि दिनांक 10.01.2024 के निर्णय के द्वारा, एक प्रारंभिक डिक्री पारित किया गया है, जिसमें पक्षकारगण के हिस्सों को निम्नानुसार घोषित किया गया है:

अपीलकर्ता	विषयगत संपत्ति में 1/2 अविभाजित हिस्सेदारी
प्रत्यर्थी संख्या 1	विषयगत संपत्ति में 1/6 अविभाजित हिस्सेदारी
प्रत्यर्थी संख्या 2	विषयगत संपत्ति में 1/6 अविभाजित हिस्सेदारी
प्रत्यर्थी संख्या 3	विषयगत संपत्ति में 1/6 अविभाजित हिस्सेदारी

48. यदि विभाजन के लिए प्रारंभिक डिक्री अभी तक तैयार नहीं किया गया है, तो उसे तैयार किया जाए। यदि कोई डिक्री पहले ही तैयार की जा चुकी है, तो डिक्री को उपरोक्त प्रभाव के अनुसार संशोधित किया जाए।

49. वर्तमान अपील पर आगे विचार किया जाएगा; और दैनिक आदेश के भाग के रूप में परिणामी निर्देश जारी किए जाएंगे।

न्या. अनूप जयराम भंभानी

11 मार्च, 2024

वी.रावत/डी.एस.

(Translation has been done through AI Tool: SUVAS)

अस्वीकरण : *देशी भाषा में निर्णय का अनुवाद मुकद्दमेबाज़ के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा। समस्त कार्यालयी एवं व्यावहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेज़ी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।*